पंजीयन संख्या : 68939 /98 अंक – 27, वर्ष – 24

ज्ञान तत्व

समाज शास्त्र

अर्थ शास्त्र

धर्म शास्त्र

राजनीति शास्त्र

442

– : सम्पादक :–

बजरंग लाल अग्रवाल

रामानुजगंज (छ.ग.)

सत्यता एवं निष्पक्षता का निर्भीक पाक्षिक

पोस्ट की तारीख 01 / 03 / 2024
प्रकाशन की तारीख 15 / 02 / 2024
पाक्षिक मूल्य – 2.50/– (दो रूपये पचास पैसे)
पेज संख्या – 24

“ शराफत छोड़ो, समझदार बनो ”

“ सुनो सबकी, करो मन की ”

“ समस्याओं के प्रणेता, कर कानून नेता ”

“ समाधान का आधार ज्ञान यज्ञ परिवार ”

“ चाहे कोई अत्याचार, नहीं करेंगे नही सहेंगे ”

“ हमें सुराज्य नही, स्वराज्य चाहिए ”

किसानों के नाम पर समाज के ब्लैकमेलरः

मैंने 20 वर्ष पहले एक लेख लिखा था जिसका शीर्षक था गाय की रोटी कुत्ता खाए। इस लेख में यह कहानी थी कि परेशान गायों को बचाने के लिए कुत्तों ने पशु संरक्षण के नाम पर आंदोलन किया और प्रशासन ने गायों की मदद के लिए आटा पीसा। लेकिन आटा गाय तक न पहुंच कर कुत्ते खाते रहे, कुत्ते मजबूत होते रहे और जब भी आटा कम पड़ता तो कुत्ते काटने को भी दौड़ने लगे। उनका तर्क था कि गाय भी पशु है, कुत्ता भी पशु है। ठीक यही हाल आज दिखाई दे रहा है परेशान किसानों के नाम पर मोटे–मोटे ब्लैकमेलर काटने को दौड़ रहे हैं। वे सड़के जाम कर रहे हैं। ट्रैक्टर आंदोलन कर रहे हैं और हर अपराध करने को तैयार हैं क्योंकि कुछ समय पहले तक किसानों के साथ भारी अन्याय हो रहा था। सिर्फ किसानों के नाम पर ही नहीं, गाय की रोटी खाने के लिए कुत्ते समाज के हर क्षेत्र में ब्लैकमेल कर रहे हैं। महिलाओं के नाम पर कुछ गिनी चुनी आधुनिक महिलाएं सारे समाज को ब्लैकमेल कर रही है तो आदिवासियों और हरिजन के नाम पर भी इसी प्रकार की ब्लैकमेलिंग हो रही है। लेकिन किसानों के नाम पर जो हो रहा है उसने तो समाज को बहुत अधिक चिंता में डाल दिया है।

गायों की रोटी कुत्ता न खा सके इसके लिए दो तरफा प्रयास करने होंगे। इन ब्लैकमेलर किसान नामधारी पेशेवर आंदोलनकरियों को डंडे भी मारने होंगे। महिला, आदिवासी, हरिजन के नाम पर भी पेशेवर लोगों को कमजोर करना होगा। साथ वास्तविक किसानों, महिलाओं, वनवासियों, अछूतों को सशक्त करने के लिए भी कुछ नए प्रयास करने होंगे। जब तक यह दोनों प्रयत्न एक साथ योजनाबद्ध तरीके से नहीं होते तब तक इस कैंसर बन चुकी बीमारी से छुटकारा संभव नहीं है। समाज को चाहिए कि वह इन लाभ उठा चुके कुत्तों से कोई सहानुभूति न रखें और परेशान हो रही गायों की मदद करने के लिए नये योजना बनाने पर सोचें। गाय और कुत्ता दोनों ही पशु है, आधुनिक महिला और परंपरागत परिवार की महिला दोनों ही महिला है। खेतों, सड़कों पर मजदूरी कर रहा आदिवासी, हरिजन और मंत्री, विधायक सरकारी कर्मचारी बनकर मोटा हो चुका। अछूत, आदिवासी भी पीड़ित है इस विचार को पूरी तरह छोड़ देने की आवश्यकता है। यदि वर्तमान समय में सरकार झुककर इन ब्लैकमेलर किसानों से कोई समझौता करती है तो वह सरकार की गलती मानी जाएगी। मैं अंत में कहना चाहता हूं कि गाय की रोटी खा–खा कर मोटे हो चुके कुत्तों को अब दंडित करने की आवश्यकता है।

यह बात सही है कि किसानों महिलाओं अछूतों ग्रामीणों के साथ समाज में भेदभाव हुआ उस भेदभाव के परिणाम स्वरूप वे लोग योग्यता के आधार पर आगे नहीं बढ़ सके। लेकिन स्वतंत्रता के बाद जब यह बात समझ में आई और इस वातावरण को बदलने का प्रयास हुआ इस सहानुभूति का लाभ

धूरतों ने उठाया। एक कहने लगा कि मैं अन्नदाता हूं मैं इस संबंध में विचार किया मैंने यह पाया कि 'अन्नदाता बड़ा होता है' कि 'करदाता बड़ा होता है'। आज समाज का व्यापारी वर्ग बड़ी मात्रा में टैक्स दे रहा है अगर करदाता टैक्स न दें तो यह अन्नदाता भूखे मर जाएंगे, क्योंकि इन्हें सस्ती खाद चाहिए सस्ता पानी चाहिए, सस्ता बीज चाहिए, महंगा अनाज बेचने की सुविधा चाहिए, सारे देश को यह अन्नदाता के नाम पर लूट लेना चाहते हैं३ अब करदाताओं को एकजुट होकर टैक्स देना बंद कर देना चाहिए इन अन्नदाताओं की अकल ठिकाने लग जाएगी। अपने को अन्नदाता कह कर के यह लोग जितना ब्लैकमेल कर रहे हैं वह उचित नहीं है। मेरा सुझाव है की करदाताओं को इस संबंध में गंभीरता से सोचना चाहिए।

यह तय है कि संगठित किसानो ने छोटे किसानों का हक मार कर अपने को मोटा कर लिया और वह अब समाज को ब्लैकमेल करने की कोशिश कर रहे हैं। अब हम चर्चा करेंगे जातिवाद और आरक्षण की। जातिवाद के नाम पर भी कुछ लोगों ने संगठित होकर जातिवाद का लाभ उठाया है किसानों के नाम पर ही नहीं, गाय की रोटी खाने के लिए कुत्ते समाज के हर क्षेत्र में ब्लैकमेल कर रहे हैं।

आरक्षण उस लाभ प्राप्ति का ही एक माध्यम है आरक्षण और जाति जन्म से नहीं कर्म और परिस्थिति के आधार पर होनी चाहिए लेकिन जन्म के आधार पर जातियों को मान्यता दे दी गई और अंबेडकर नेहरू ने मिलकर जातिवाद का लाभ उठाने के लिए जन्म अनुसार जाति को मान्यता भी दे दी, यह पूरी तरह षड्यंत्र था। उस मान्यता का लाभ आज धूर्त लोग उठा रहे हैं और पूरे समाज को ब्लैकमेल कर रहे हैं। मैं हमेशा जातिवाद और जातीय संगठनों का विरोध किया लेकिन कोई अच्छा परिणाम नहीं निकल सका नरेंद्र मोदी ने दूसरे तरीके से जातिवाद के विरोध की योजना बनाई है उन्होंने जातीय व्यवस्था को चार आधार पर बांटने का प्रयत्न शुरू किया है गरीब युवा किसान और महिला के नाम से यह चार नई जातियां बनाई जा रही हैं। इन चारों जातियों को आरक्षण दिया जाएगा और अब तक जो आरक्षण है उसकी पूरी तरह समाप्त कर दिया जाएगा। मेरे विचार से यह तरीका बहुत अच्छा तो नहीं है किंतु वर्तमान समय में यह तरीका उपयुक्त हो सकता है किसानों के नाम पर ही नहीं, गाय की रोटी खाने के लिए कुत्ते समाज के हर क्षेत्र में ब्लैकमेल कर रहे हैं। नरेंद्र मोदी ने जो तरीका बताया है उस तरीके का भी प्रयोग करने की जरूरत है ज्योही इस तरह का प्रयोग शुरू होगा त्यों ही जाति के नाम पर लाभ उठाने वाले धूर्त लोग इस तरीके का विरोध करना शुरू कर देंगे जैसा कि अभी दिख भी रहा है। मैं नरेंद्र मोदी के तरीके का भी समर्थन करता हूं किसानों के नाम पर ही नहीं, गाय की रोटी खाने के लिए कुत्ते समाज के हर क्षेत्र में ब्लैकमेल कर रहे हैं।

सांप्रदायिक भाईचारे पर होना चाहिए गम्भीर विचार:

इरफान हबीब एक वामपंथी इतिहासकार माने जाते हैं उन्होंने यह बात साफ की है की वाराणसी और मथुरा में जो मस्जिद बनाई गई है वह मंदिर तोड़कर बनाई गई है लेकिन हिंदुओं को अब इस मामले को भुला देना चाहिए और उन्हें चाहिए कि वह अब नए सिरे से नई परिस्थितियों में सोचना शुरू करें जिसमें सांप्रदायिक भाईचारा हो। इरफान हबीब ने जो कहा हम उस पर गंभीरता पूर्वक विचार करने के लिए तैयार है। हमारे लिए प्रश्न मंदिर मस्जिद का नहीं है हमारे लिए प्रश्न यह है कि जिस तरह स्वतंत्रता के पहले मुसलमान ने आपसी भाईचारा को धोखा देकर पाकिस्तान ले लिया वैसा ही दोबारा नहीं करेंगे इस बात की क्या गारंटी है। यदि मुसलमान इस बात की घोषणा तैयार करने को तैयार हो कि हम भारत का कानून माने के लिए तैयार हैं, हम संविधान को मानने के लिए तैयार हैं, भविष्य में हम समान नागरिक संहिता मानने को तैयार हैं, हम हिंदुओं और मुसलमान को बराबरी का अधिकार देने के लिए तैयार हैं। तब इरफान हबीब ने जो कहा है वह बात विचारणीय हो सकती है अन्यथा ऐसा लगता है कि इरफान हबीब की सोच भी कहीं ना कहीं सांप्रदायिक है भले ही वह मीठी जहर घुली हो। जिस धर्म के बहुमत ने गांधी को धोखा दिया उस धर्म के वर्तमान लोगों को अब इस बात का विश्वास दिलाना होगा कि हम मे बदलाव आ गया है

अनावश्यक कानूनों के खात्मे को मोदी सरकार तैयार:

कल नरेंद्र मोदी ने संसद में एक भाषण दिया भाषण में अधिकांश बातें तो राजनीतिक ही थी लेकिन थोड़ी देर के लिए ही उन्होंने 2024 से 29 तक की अपनी योजना प्रस्तुत की। उस योजना में उनकी मुख्य बात यह थी की सरकार गांधी के मार्ग पर चलना चाहती है सरकार अनावश्यक कानून को हटाना चाहती है और हम चाहते हैं कि समाज की स्वतंत्रता में राज्य किसी प्रकार का हस्तक्षेप ना करें जब तक किसी प्रकार का कोई अपराध नहीं होता है। नरेंद्र मोदी ने यह बात भी साफ की की हमारी सरकार धीरे–धीरे कानून हटा रही है आम लोगों को कानून के जाल से स्वतंत्रता दे रही है। सरकार नहीं चाहती है कि आम लोगों के सामाजिक जीवन में सरकार का किसी प्रकार का दखल हो। हमने अनेक टैक्स हटाकर एक टैक्स लागू किया है हम अनेक प्रकार के चुनाव को समाप्त करके एक साथ चुनाव कराने की बात सोच रहे हैं हम अनेक प्रकार के धर्म को स्वतंत्रता और समानता के साथ भेदभाव भूलने की प्रेरणा दे रहे हैं हम जातिवाद को भी कानूनी हस्तक्षेप से मुक्त करना चाहते हैं। हम चाहते हैं कि हम अनेक प्रकार की जातियों के जंजाल से मुक्त होकर गरीब, महिला, किसान और युवा नामक चार जातियों पर फोकस करें। हम चाहते हैं कि देश में कम से कम कानून रहे। नरेंद्र मोदी की इस घोषणा का हम स्वागत करते हैं हमें

उम्मीद है कि नरेंद्र मोदी धीरे–धीरे लोग स्वराज की दिशा में बढ़ सकते हैं। यदि सरकार अगले चुनाव के बाद इस दिशा में बढ़ती है तो हमारा सरकार को समर्थन रहेगा।

EVM की बढ़ती विश्वसनीयताः

अभी कल पाकिस्तान के चुनाव संपन्न हुए हैं चुनाव में किस प्रकार धांधली हुई यह दुनिया ने देखा है। पाकिस्तान के राष्ट्रपति ने आज एक बयान दिया है कि पाकिस्तान के चुनाव यदि मत पत्रों की जगह ईवीएम से कराए जाते तो अधिक अच्छा होता। ईवीएम से चुनाव कराने में गिनती करने में भी अधिक समय नहीं लगता है और हेरा फेरी करने की गुंजाइश भी कम रहती है ईवीएम एक मशीन है मनुष्य नहीं इसलिए ज्यादा विश्वासनीय है। पाकिस्तान के राष्ट्रपति का यह सुझाव भारत के उन नेताओं के लिए एक तमाचा है जो वर्तमान चुनाव प्रणाली में टीवीएम के जगह मत पत्रों का उपयोग करना चाहते हैं। निश्चित रूप से उनकी नियत खराब है तभी वे लोग साफ सुथरा चुनाव नहीं देखना चाहते। मैं खुद मत पत्रों का चुनाव भी देखा है और एवं ईवीएम का चुनाव भी देखा है और मैं यह समझता हूं कि मत पत्रों के द्वारा चुनाव करने में ज्यादा गड़बड़ी की गुंजाइश थी जो पहले के नेता लोग हमेशा करते रहते थे। अब फिर से विपक्ष इस तरह की धांधलि चाहता है और इसलिए मत पत्रों से चुनाव करना चाहता है पाकिस्तान के अनुभव से भारत को सिख मिलनी चाहिए।

जाती जनगणना समाज के लिए घातक–अवमुक्तेश्वरानन्दः

कल रायपुर में शंकराचार्य स्वामी अविमुक्तेश्वर आनंद जी ने अपने विचार रखें। उन्होंने तीन बातें साफ की पहले यह की गाय हिंदुओं की आस्था का केंद्र है गाय को राष्ट्रीय पशु घोषित करने की आवश्यकता है। दूसरी बात उन्होंने यह कहीं कि जातिवाद बहुत बड़ा जहर है देश में जातीय जनगणना की कोई जरूरत नहीं है जाती जनगणना समाज के लिए घातक है जो लोग जाति जनगणना की बात करते हैं वे वास्तव में हिंदू नहीं है। तीसरी बात उन्होंने यह कही कि देश में सांप्रदायिकता के आधार पर धुरुवीकरण नहीं होना चाहिए धार्मिक आधार पर धुरुवीकरण करने के प्रयास पहले भी गलत थे आज भी गलत है और भविष्य में भी गलत रहेंगे। मैं समझता हूं कि शंकराचार्य जी ने ही तीनों ही बातें बहुत ठीक से कही है। यह सच बात है की गाय को महत्व दिया जाना चाहिए यह भी सच बात है की जाती जनगणना समाज के लिए घातक है यह भी सच बात है कि धर्म के आधार पर धुरुवीकरण उचित नहीं है । मैं शंकराचार्य जी की इन बातों से सहमत हूं।

पवित्र नामों को अपमानित होने से बचाना चाहिए:

मेरे एक गांधीवादी मित्र ने यह लिखा है की हरियाणा बॉर्डर पर किसानों पर जो बर्बर लाठी चार्ज हुआ है वह जलियावाला बाग के समान है कुछ दिनों पूर्व मेरे एक अन्य मित्र ने यह भी लिखा था की मनीष सिसोदिया भगत सिंह के समान हैं। मैं आज तक नहीं समझ सका की जलियावाला बाग की तुलना इस किसान आंदोलन से कैसे की जा सकती है जलियावाला बाग देशभक्ति का आंदोलन था स्वतंत्रता की लड़ाई थी देश के लिए संघर्ष था। वर्तमान किसान आंदोलन सुविधा की लड़ाई है स्वार्थी तत्वों की लड़ाई है देश का अधिक से अधिक संसाधन लूटने की लड़ाई है मनीष सिसोदिया का मामला भ्रष्टाचार का मामला है कानून के अनुसार किया जा रहा है कहीं भी इसमें भगत सिंह या जलियांवाला बाग जैसी ना कोई भावना है ना कोई क्रिया है। मैं चाहता हूं कि हम जलियांवाला बाग और भगत सिंह जैसे पवित्र नाम को इस प्रकार अपमानित करने से बचे।

भावना और बुद्धि के संतुलन का मार्ग है आर्यसमाज:

मैंने विचार शक्ति आर्य समाज से प्राप्त की है मुझे गर्व है कि मैं आर्य समाज से जीवन भर जुड़ा रहा मेरा परिवार पहले भी पौराणिक था आज भी पौराणिक है फिर भी मेरी यह मानता है कि प्रत्येक व्यक्ति में भावना और बुद्धि का संतुलन होना चाहिए। बुद्धि व्यक्ति को नास्तिकता की तरफ ले जाती है भावना आस्तिकता की तरफ ले जाती है दोनों का ही अतिवाद नुकसान करता है इसलिए व्यक्ति को दोनों ही मामले में संतुलन बनाकर रखना चाहिए। वर्तमान दुनिया में यह संतुलन बिगड़ रहा है या तो लोग अतिवादी भावना प्रधान हो रहे हैं या अतिवादी बुद्धि प्रधान। हिंदू मुसलमान ईसाई यह अतिवादी भावना प्रधान माने जाते हैं धार्मिक लोग भावना प्रधान माने जाते हैं दूसरी ओर साम्यवादी बुद्धि प्रदान माने जाते हैं साम्यवादी राजनीति की तरफ बहुत ज्यादा झुके रहते हैं मेरे विचार से हमें आर्य समाज और सनातन धर्म की बीच संतुलन का मार्ग चुनना चाहिए अतिवादी भावना हमें भौतिक नुकसान करती है अतिवादी तर्क हमें नैतिक गिरावट की ओर ले जाता है आज दुनिया में नैतिक पतन बढ़ाने का कारण इन दोनों का अतिवाद ही है मेरा अपना सुझाव है कि हम भावना और बुद्धि के संतुलन का मार्ग पकडें। मैं अपने को दुनिया का सबसे सुखी व्यक्ति मानता हूं और उसका कारण यह मानता हूं कि मैंने भावना और बुद्धि के संतुलन का मार्ग खोज लिया है।

गाँधी ने दी हिंदुत्व श्रेष्ठतम परिभाषा:

गांधी के विषय में मेरे विचार अन्य अनेक लोगों की तुलना में अलग है। मैं यह मानता हूं कि हिंदुत्व की सबसे अच्छी परिभाषा गांधी ने दी है गांधी

ने हिंदुत्व को बचा लिया अन्यथा यदि सावरकर की परिभाषा प्रचलित होती तो हिंदुत्व इस्लाम की राह पर चला जाता इसलिए गांधी को धन्यवाद दिया जाना चाहिए कि उन्होंने हिंदुत्व की सुरक्षा की। गांधीवाद की अलग परिभाषा है सत्य और अहिंसा के नेतृत्व में तत्कालीन परिस्थितियों का सबसे अच्छा समाधान गांधीवाद माना जाता है मैं इस परिभाषा को बिल्कुल ठीक मानता हूं सत्य और अहिंसा के नेतृत्व में ही तत्कालीन समस्याओं का समाधान खोजा जाना चाहिए। गांधीवादियों की एक अलग पहचान बन गई है साम्यवादियों की पूंछ पड़कर नेहरू खानदान की गुलामी करना और नक्सलवादी मुस्लिम आतंकवाद का समर्थन करना गांधीवादी की पहचान है। वर्तमान में गांधीवादी आपको वही मिलेगा जो संपत्ति के लिए लड़ रहा हो जो पोस्ट के लिए लड़ रहा हो जो नरेंद्र मोदी को गाली दे रहा हो वही गांधीवादी की पहचान बनी हुई है इसलिए मैं गांधीवादी नहीं हूं गांधी का प्रशंसक हूं गांधीवाद को अच्छा समाधान मानता हूं गांधीवादियों से दूर रहता हूं। वर्तमान भारत में नरेंद्र मोदी और मोहन भागवत गांधी की राह पर चल रहे हैं और नेहरू परिवार गांधी विरोधी दिशा में।

विपक्ष की अनिवार्यता लोकतंत्र में एक भ्रम है:

मेरे कई मित्र यह लिखते रहे हैं की आदर्श लोकतंत्र में विरोधी पक्ष होना आवश्यक है। मैं इस संबंध में बहुत विचार किया। मुझे लगा कि यदि लोकतंत्र की यह परिभाषा है तो या तो यह परिभाषा गलत है अथवा लोकतंत्र ही गलत है। लोकतंत्र में विपक्ष होना क्यों आवश्यक है। आदर्श स्थिति तो यह होती कि किसी भी विषय पर विचार बंधन के समय प्रत्येक व्यक्ति को अपना विचार रखने की स्वतंत्रता होनी चाहिए चाहे वह विचार उस प्रस्ताव के विपक्ष में ही क्यों ना हो यह स्वतंत्रता ही लोकतंत्र है ना कि विरोध करने की अनिवार्यता। हमने लोकतंत्र की अभी तक जो परिभाषाएं पड़ी हैं वे सब गलत हैं वे विदेशों से उधार ली गई परिभाषाएं हैं लोकतंत्र की वास्तविक परिभाषा नहीं। लोकतंत्र तो लोक नियंत्रित तंत्र होता है जिसमें विरोध मत व्यक्त करने की स्वतंत्रता होती है अनिवार्यता नहीं। भारत का लोकतंत्र ठीक दिशा में जा रहा है विपक्ष पूरी तरह समाप्त हो रहा है। कांग्रेस के बड़े–बड़े धुरंधर लगातार भारतीय जनता पार्टी में शामिल हो रहे हैं अगर राजनीति एक ध्रुवीय हो रही है तो इसमें लोकतंत्र पर कहां से खतरा आ गया मैं तो गांधी का पक्षधर हूं जिन्होंने यह कहा था कि लोकतंत्र का अर्थ सर्व सम्मति होता है विरोधी पक्ष नहीं आज गांधी विरोधी लोग लोकतंत्र का अर्थ विपक्ष की अनिवार्यता से लगते हैं मैं भारत के लोकतंत्र की दिशा से संतुष्ट हूं। भारत के वर्तमान नकली लोकतंत्र से जितनी जल्दी मुक्ति मिल जाए उतना ही अच्छा है वहीं से लोक स्वराज की संभावनाएं बनेगी।

प्रधानमंत्री की दोड़ से बाहर होते अरविन्द केजरीवालः

भारत के सभी मुख्यमंत्री की लोकप्रियता का आकलन एक सर्वेक्षण इकाई में किया है। उसमें पाया गया की उड़ीसा के मुख्यमंत्री सबसे ज्यादा लोकप्रिय है दूसरा नंबर उत्तर प्रदेश का है तीसरा नंबर असम का है चौथा नंबर त्रिपुरा का है और पांचवा नंबर गुजरात का है। मैं बहुत ध्यान देकर खोज रहा था कि अरविंद केजरीवाल कहां है लेकिन अरविंद केजरीवाल का उसमें कहीं नाम नहीं मिला। स्पष्ट है कि अरविंद केजरीवाल की लोकप्रियता भारत में बहुत तेजी से गिर रही है अरविंद को इस विषय पर गंभीरता से सोचना चाहिए अन्यथा वे प्रधानमंत्री की दौड़ से भी बाहर हो जाएंगे। अरविंद केजरीवाल जिन्हें देश की जनता भावी प्रधानमंत्री के रूप थे देख रही थी वे एक अच्छे मुख्यमंत्री के लिए भी चुनाव न जीत सके यह उनके लिए बहुत चिंतन का विषय है।

मंथन क्रमांक 9
विषय– किसान आत्महत्या की समीक्षा

किसी कार्य के परिणाम की कल्पना और यथार्थ के बीच जब असीमित दूरी का अनुभव होता है तब कभी कभी व्यक्ति आत्महत्या की ओर अग्रसर होता है। इसका अर्थ हुआ कि यदि परिणाम की कल्पना असंभव की सीमा तक कर ली गई अथवा किसी दुर्घटनावश परिणाम अप्रत्याषित हुए तभी व्यक्ति को असीमित दुख होता है। ऐसा व्यक्ति ही कभी कभी आत्महत्या कर लेता है। आत्महत्या करने वालों में सब प्रकार के लोग होते हैं। छात्र भी बडी संख्या में आत्महत्या करते हैं तो महिलाएँ अथवा व्यापारी भी। कभी कभी तो राजा तक आत्महत्या करते पाये जाते हैं। यह अलग बात है कि किसानों की आत्महत्या कुछ अधिक प्रचारित हुई।

किसान तीन प्रकार के हैं–

(1) जो अपनी भूमि में स्वयं खेती करते है।

(2) जो अपनी भूमि में मजदूरों से खेती कराते है।

(3)जो उन्नत तकनीक तथा कृत्रिम उर्जा के सहारे खेती करते हैं।

ऐसे उन्नत किसानों को ही फार्महाउस वाला किसान कहा जाता है। जिन किसानों ने आत्महत्या की है उनमें फार्महाउस वाला उन्नत किसान लगभग नहीं है। जो किसान अपनी जमीन पर स्वयं खेती करता है और अपने उपयोग में लाता है,वह भी आत्महत्या नहीं करता। भारत में जिन लाखों किसानों ने आत्महत्या की है वे लगभग बीच वाले किसान थे जो छोटी जोत के मालिक थे और मजदूरों के माध्यम से खेती कराते रहे हैं। विचारणीय प्रष्न यह है कि किसी मजदूर ने आत्महत्या नहीं की। दूसरा विचारणीय प्रश्न यह भी है कि यदि खेती घाटे का सौदा है तो देष में लगातार कृषि उत्पादन बढ रहा है। ये दोनों प्रश्न सही होते हुये भी यह प्रश्न सच है कि बडी मात्रा में बीच वाले

किसान आत्महत्या कर रहे है। इसके कई कारण हैं –

(1) स्वतंत्रता के बाद श्रम का मूल्य बढा और कृषि उत्पादन का मूल्य घटा। भारत में स्वतंत्रता के बाद मुद्रा का अवमूल्यंन 91 गुना हुआ है। इसका अर्थ है कि यदि सन 47 में किसी वस्तु का मूल्य 1 रु था और आज 91 रु है तो वह समतुल्य है। यदि हम श्रममूल्य का आकलन करें तो वह वर्तमान में 91 की तुलना में लगभग 170 हो गया है। दूसरी ओर यदि हम अनाज के मूल्य का आकलन करें तो वह दालों को छोडकर लगभग 45 गुना ही बढा है। इसका अर्थ हुआ कि श्रम मूल्य की तुलना में कृषि उत्पादन का मूल्य एक चौथाई ही रह गया है। उपर से मंहगाई का झूठा हल्ला उस बेचारे उत्पादक को और भी अधिक परेषान किये रहता है। वैसे भी हम देख सकते है कि यदि स्वतंत्रता के समय एक मजदूर को एक दिन का डेढ़ किलो अनाज देते थे तो आज 8 किलो दे रहे हैं। इसमें कुछ बढ़ती हुई विकास दर का भी योगदान है किन्तु किसान पूर्व की तुलना में चार गुना अधिक अनाज श्रमिक को देता है। साधारण किसान किसी तरह सामान्य रुप से तो अपना खर्च चलाता है किन्तु आकस्मिक विपत्ति के समय उसका धैर्य टूट जाता है और वह भावनाओं में बहकर आत्महत्या कर लेता है।

(2) किसान के उत्पादन का मूल्य बढ नहीं पाता क्योंकि अपेक्षाकृत सस्ती कृत्रिम उर्जा और तकनीक से खेती करने वालो के साथ वह बीच वाला किसान प्रतिस्पर्धा नहीं कर पाता। उन्नत तकनीक से उत्पादित कृषि उत्पादन सम्पूर्ण कृषि उत्पादन का मूल्य बढने ही नहीं देता। साथ ही राजनैतिक व्यवस्था पर उपभोक्ताओं का प्रभाव अधिक रहता है और वे बाजार तथा राजनीति पर पूरी तरह हावी रहते है तो उपभोक्ता किसी भी रुप में किसी उत्पादन का मूल्य संतुलित होने ही नहीं देते। भले ही उत्पादक आत्महत्या ही क्यों न कर ले।

(3) किसानों का भावनात्मक रुप से जमीन के साथ मोह पैदा कर दिया जाता है जिससे किसान अपनी जमीन बेचकर या खाली छोडकर किसी अन्य दिशा में नहीं जा पाता। सामाजिक तथा राजनैतिक वातावरण किसानों की झूठी प्रशंसा करके उन्हें जमीन के साथ जोडे रखना चाहता है। यदाकदा राजनैतिक व्यवस्था भीख के बतौर कुछ सुविधायें देकर भी ऐसे मजबूर किसानों को खेती के प्रति लगाव बनाये रखती है। इस तरह तीन ऐसे कारण है जो किसानों की आत्महत्या के कारण के लिए माने जाते है। स्पष्ट है कि अन्य लोगों की आत्महत्याएॅ भले ही भावनात्मक कारणों से होती हों किन्तु किसानों की आत्महत्या में कोई भावनात्मक कारण न होकर मजदूरी ही एकमात्र कारण होती है।

यदि हम समाधान पर विचार करें तो समाधान भी साधारण बात नहीं है। कृषि उत्पादन का मूल्य बढा दिया जाये तब बडे किसान ही बहुत ज्यादा लाभान्वित होंगे। यदि खाद, बीज, बिजली, पानी सस्ता कर दिया जाये तब भी

बडे किसान ही लाभान्वित होंगे। इन आत्महत्या करने वालों के हिस्से में कुछ नहीं आयेगा। श्रम का मूल्य कम नही किया जा सकता क्योंकि श्रम बुद्धि और धन की तुलना में बहुत ज्यादा असमानता हो गई है और श्रम का मूल्य और अधिक बढना चाहिए। किसानों की आत्महत्या रोकने के लिए श्रममूल्य वृद्धि को नहीं रोका जा सकता। मैं स्पष्ट कर दूॅं कि वर्तमान समय में किसान आत्महत्या के नाम पर जो भी किसान आन्दोलन हो रहे है वे बडे किसानों के नेतृत्व में हो रहे है। ये किसान खाद, बिजली, पानी का मूल्य घटाने की बात करते है। ये किसान श्रममूल्य वृद्धि के भी विरुद्ध वातावरण बनाते है किन्तु ये बडे किसान खेती की दुर्दशा के मूल कारण को नहीं खोज पाते।

मैंने राष्ट्रीय और सामाजिक भावनाओं में बहकर व्यापार छोड दिया और जनहित में खेती का व्यापार करने लगा। 30 वर्षो तक पूरा पूरा परिश्रम करने के बाद भी मेरी स्थिति इतनी खराब हुई कि मेरे समक्ष आत्महत्या के अतिरिक्त कोई मार्ग नहीं था। मैंने सन 95 में हार मानकर खेती छोड दी। मैं स्पष्ट कर दूॅं कि खेती छोडकर मेरे परिवार ने बहुत अच्छा किया। मुझे पूरा अनुभव है कि खेती घाटे का व्यवसाय है यदि उन्नत तकनीक से न किया जाये तो। इसका अर्थ हुआ कि जिस तरह सम्पूर्ण भारत में लघु उद्योग मरणासन्न है,छोटे व्यापारी परेषान है, छोटे उद्योगपति परेशान है उसी तरह आज छोटे किसान भी आत्महत्या कर रहे है क्योंकि सम्पूर्ण भारत में सब प्रकार के कार्यो का केन्द्रियकरण हो रहा है और इस केन्द्रियकरण की चपेट में छोटे किसान भी है। इसका अर्थ हुआ कि समस्या कही और है और समाधान कही और। किसानों की आत्महत्या रोकने का एक ही इमानदार समाधान हो सकता है कि कृत्रिम उर्जा का मूल्य इतना अधिक बढा दिया जाये कि उन्नत किसान मध्यम किसान और छोटे किसान एक दूसरे के साथ खुली प्रतिस्पर्धा कर सके या कम से कम इतना अवश्य हो कि तकनीक तकनीक वंचित का तथा श्रम का शोषण न कर सके। मैं जानता हूॅं कि इस मूल्यवृद्धि का आयात निर्यात पर दुष्प्रभाव हो सकता है किन्तु उसका समाधान कठिन नहीं। कितने दुख की बात है कि स्वतंत्रता के बाद से लेकर सन 2010 तक लगभग सभी कृषि उत्पादनों पर टैक्स वसूला जाता था और वह टैक्स वसूल कर उपभोक्ताओं को सस्ता अनाज बांटने में खर्च किया जाता था। कुछ कृषि उत्पादों पर तो आज तक टैक्स माफ नहीं हुआ है।

हमारी राजनैतिक व्यवस्था गरीब, ग्रामीण, श्रमजीवी, छोटे किसान के विषय में भाषण तो बहुत देती है किन्तु इन चारों के उत्पादनों और उपभोग की वस्तुओं पर भारी कर लगाकर शिक्षा, स्वास्थ,सस्ता आवागमन आदि पर खर्च करती है। यदि ऐसी विपरीत परिस्थितियों में छोटा किसान आत्महत्या करता है तो विचार करिये कि दोष किसान का है या समाज का है या हमारी राजनैतिक व्यवस्था का? ग्रामीण अर्थव्यवस्था को चौपट करके शहरी अर्थव्यवस्था का प्रोत्साहन इससे अतिरिक्त अन्य कोई परिणाम नहीं दे सकता। मैं चाहता हूॅं कि

किसान आत्महत्या पर गंभीरता से विचार करके इसका समाधान खोजा जाना चाहिए।

मंथन क्रमांक 49
ग्रामीण और शहरी व्यवस्था

हजारों वर्षो से बुद्धिजीवियों तथा पूंजीपतियों द्वारा श्रमषोषण के अलग अलग तरीके खोजे जाते रहे हैं। ऐसे तरीको में सबसे प्रमुख तरीका आरक्षण रहा है। स्वतंत्रता के पूर्व आरक्षण सिर्फ सामाजिक व्यवस्था में था जो बाद में संवैधानिक व्यवस्था में हो गया। श्रमषोषण के उददेष्य से ही सम्पत्ति का भी महत्व बढाया गया। सम्पत्ति के साथ सुविधा तो थी ही किन्तु सम्मान भी जुड गया था। स्वतंत्रता के बाद पश्चिमी देशों की नकल करते हुये श्रमशोषण के लिए सस्ती उच्च तकनीक का एक नया तरीका खोज निकाला गया। वर्तमान समय में श्रमशोषण के माध्यम के रुप में सस्ती तकनीक का तरीका सबसे अधिक कारगार है।

श्रमशोषण के प्रयत्नों के परिणामस्वरुप अनेक विषमतायें बढती गई। इनमें आर्थिक असमानता तथा शिक्षा और ज्ञान के बीच की असमानता तो शामिल है ही किन्तु शहरी और ग्रामीण सामाजिक, आर्थिक असमानता भी बहुत तेजी से बढती चली गई। शहरों की आबादी बहुत तेजी से बढी तो गांव की आबादी लगभग वैसी ही है या बहुत मामूली बढी है। गांव के लोग छोड छोड कर शहरों की ओर पलायन कर रहे है। यदि पूरे भारत की विकास दर औसत छः मान लिया जाये तो गांवो का विकास एक प्रतिशत हो रहा है तो शहरों का प्रतिवर्ष 30 प्रतिशत। यह विकास का फर्क और अधिक तेजी से शहरों की ओर पलायन को प्रेरित कर रहा है। यदि हम वर्तमान स्थिति की समीक्षा करें तो ग्रामीण उद्योग करीब करीब समाप्त हो गये है। शिक्षा हो या स्वास्थ्य सभी सुविधायें शहरों से शुरु होती है और धीरे धीरे इस तरह गांव तक पहुंचती है जिस तरह पुराने जमाने में बडे लोग भोजन करने के बाद गरीबों के लिए जुठन छोड देते थे। गांव के रोजगार में श्रम का मूल्य शहरों की तुलना में बहुत कम होता है। यहॉ तक कि सरकार द्वारा घोषित गरीबी रेखा में भी शहर और गांव के बीच भारी अंतर किया गया है। गांव के व्यक्ति की गरीबी रेखा का आकलन 28 रु प्रतिदिन है तो शहर का 32 रु प्रतिदिन हैं।

यदि हम सामाजिक जीवन के अच्छे बुरे की समीक्षा करें तो दोनों में बहुत अधिक अंतर है। गांव के लोग सुविधाओं के मामले में शहरी लोगों की तुलना में कई गुना अधिक पिछडे हुए है तो नैतिकता के मामले में गांव के लोग शहर वालों की अपेक्षा कई गुना आगे है। गांव के लोग शराबी अशिक्षित गरीब होते हुए भी सच बोलने, मानवता का व्यवहार करने या ईमानदारी के मामले में शहरों की तुलना में बहुत आगे है। शहरों के लोग गांव में जाकर उन पर दया

करके कुछ मदद भी करते है तो उससे कई गुना अधिक उन बेचारों का शोषण भी करते है। गांव में शहरों की अपेक्षा परिवार व्यवस्था बहुत अधिक मजबूत है, शहरों में तलाक के जितने मामले होते है गांव में उससे बहुत कम होते है। धुतर्ता के मामले भी शहरों में अधिक माने जाते है। अपराध अथवा मुकदमें बाजी भी गांव मे कम होती है। सामाजिक जीवन भी शहरों की तुलना में गांव का बहुत अच्छा है। मैं स्वयं जिस गांवनुमा शहर में रहता हॅू वहॉ अपने घर से दूर दूर तक के लोगों से प्रत्यक्ष भाई चारा का संबंध है। दूसरी ओर मैं पांच वर्ष दिल्ली में लक्ष्मीनगर में रहा। मेरे फ्लैट में और भी लोग रहते थे लेकिन किसी से मेरा परिचय नहीं हुआ। मेरे निवास से ठीक नीचे वाली मंजिल का मालिक मर गया और मुझे लाष उठ जाने के बाद पता चला। जबकि आने जाने की सीढी भी एक थी। गांव के संबंधो में प्राकृतिक व्यवहार होता है तो शहरी जीवन में व्यवहार बनावटी और औपचारिक हो जाता है।

इन सब अच्छाईयों बुराईयों के बाद भी शहर लगातार बढते जा रहे है। ऐसा दिखता है कि शहरों का जीवन नर्क सरीखा है। पर्यावरण प्रदूषित है। हवा भी साफ नहीं है फिर भी लोगों का पलायन जारी है क्योंकि शहर और गांव के बीच सुविधाओं के मामले में भी गांव कमजोर है तथा रोजगार के मामले में भी। होना तो यह चाहिये था कि शहरों की तुलना में गांव को कर मुक्त किया जाता तथा शहरों की अपेक्षा गांवो को कुछ अधिक सुविधायें दी जाती। यदि ऐसा न भी करना हो तो कम से कम गांव शहर को स्वतंत्र प्रतिस्पर्धा की छूट देनी चाहियें थी किन्तु पिछले 70 वर्षो में इसके ठीक विपरीत हुआ। गांव से होने वाले उत्पादन पर भारी टैक्स लगाकर उसका बडा भाग शहरों पर खर्च किया गया। वह भी इतनी चालाकी से कि गांव पर टैक्स भी अप्रत्यक्ष लगा और शहरों को सुविधा भी अप्रत्यक्ष दी गई। दूसरी ओर गांव को प्रत्यक्ष छूट दी गई और शहरों पर प्रत्यक्ष कर लगाया गया। ऐसा दिखता है जैसे गांव को मानवता के नाते जिंदा रखने की मजबूरी मानकर रखा जा रहा है तो शहरों को विष्व प्रतिस्पर्धा के लिए महत्वपूर्ण भूमिका मानकर, जबकि सच्चाई इसके ठीक विपरीत है। गांव सबकुछ उत्पादन कर रहे है और शहर सिर्फ उपभोग।

शहरों की बढती आबादी एक विकराल समस्या का रुप लेती जा रही है। कई प्रकार के प्रयत्न हो रहे है किन्तु शहरों की आबादी बढती ही जा रही है क्योंकि समाधान करने वालो की नीयत साफ नहीं है। वे श्रमशोषण की पुरानी इच्छा में कोई सुधार करने को तैयार नहीं है और बिना सुधार किये समस्या का समाधान हो ही नहीं सकता। गांव से टैक्स वसूलकर शहरों पर खर्च होगा तो गांव के लोग शहरों की ओर जायेंगे ही। यह समस्या आर्थिक अधिक है सामाजिक कम और प्रशासनिक नगण्य है। इसका समाधान भी आर्थिक ही होगा। समाधान बहुत आसान है। सभी प्रकार के टैक्स समाप्त कर दिये जाये। सरकार स्वयं को सुरक्षा और न्याय तक सीमित कर ले और उस पर होने वाला

सारा खर्च प्रत्येक व्यक्ति की सम्पूर्ण सम्पत्ति पर एक दो प्रतिशत कर लगाकर व्यवस्था कर ले। अन्य सभी कार्य ग्राम सभा से लेकर केन्द्र सभा के बीच बट जावे। दूसरे कर के रुप में सम्पूर्ण कृत्रिम उर्जा का मूल्य लगभग ढाई गुना कर दिया जाये तथा उससे प्राप्त पूरी राशि देश भर की ग्राम और वार्ड सभाओं को उनकी आबादी के हिसाब से बराबर बराबर बांट दिया जाये। ग्राम सभाए आवश्यकता नुसार उपर की इकाईयो को दे सकती है। अनुमानित एक हजार की आबादी वाली ग्राम सभा को एक वर्ष मे ढाई करोड रूपया कृत्रिम उर्जा कर के रूप मे मिल सकेगा। इससे आवागमन महंगा हो जायेगा और आवागमन का महंगा होना ही ग्रामीण उद्योगों के विकास का बढा माध्यम बनेगा। गांवो का उत्पादित कच्चा माल शहरो की ओर जाता है और शहरो से वह उपभोक्ता वस्तु के रूप मे परिवर्तित होकर फिर उपभोग के लिये गांवो मे लौटता है। आवागमन मंहगा होने से गांवो का उत्पादन गांवो मे ही उपभोक्ता वस्तु के रूप मे परिवर्तित होने लगेगा। इससे गांवो का रोजगार बढेगा। कृत्रिम उर्जा मंहगी होने से शहरी जीवन महंगा हो जायेगा तथा का शहर के लोग गांवो की ओर पलायन करेंगे। गांव में श्रम की मांग और मूल्य बढ जायेगा। गांव में रोजगार के अवसर अधिक पैदा होंगे। कृत्रिम उर्जा की खपत घटने से पर्यावरण प्रदुषण भी घटेगा इससे विदेषी आयात भी घटेगा। अन्य अनेक प्रकार के लाभ भी संभावित है।

मैं स्पष्ट हूँ कि शहरी आबादी घटाने का सबसे अच्छा तरीका कृत्रिम उर्जा मूल्यवृद्धि ही है। हमारे देश के बुद्धिजीवियों को इस विषय पर गंभीरता से विचार करना चाहिए।

कृषि विषयों पर मुनि जी ने लगभग 8–9 वर्ष पहले कुछ प्रश्नोंत्तरों को प्रकाशित किया था जो प्रसंगवश पुनः प्रकाशित किया जा रहा है।

प्रश्न – आपने ज्ञान तत्व एक सौ पच्चासी छयासी में छत्तीसगढ के विषय मे लिखा है कि किसान अपनी जमीन पर पैदा कृषि उपज तथा वन उपज बेचने के लिये स्वतंत्र नही है। राज्य शासन को यह अधिकार है कि वह किसी भी कृषि उपज वन उपज को शासन द्वारा घोषित मूल्य पर बेचने हेतु किसान को बाध्य कर सकता है चाहे बाजार मे उसका मूल्य अधिक भी क्यो न हो। हम लोगों ने तो आज तक यह बात नहीं सुनी क्या छत्तीसगढ में ऐसा भी संभव हैं?

उत्तर– यह बात आज तक आपने इसलिये नहीं सुनी क्योंकि आप किसान नहीं है। जो अत्याचार किसानों के साथ छत्तीसगढ में हो रहा है वह अकेले छत्तीसगढ में न होकर पूरे भारत में हो रहा है। भाजपा सरकार के आने के बाद उसने किसानो को सस्ती बिजली या धान का खरीद मूल्य बढाने की पहल तो की किन्तु स्वतंत्र विक्रय नीति पर ध्यान नहीं दिया। सरकारी दलाल किसान नेताओं ने भी स्वतंत्रता की मांग न करके सुविधाओं की मांग की। सुविधा देने मे सरकार को कोई दिक्कत नहीं होती क्योकि सुविधा के नाम पर ही तो टैक्स

बढाने या प्रतिबंध लगाने की छूट मिलती है। किसानो पर इतने प्रतिबंध हैं कि सुनकर आपको आश्चर्य होगा। किसानों से लूट के लिये यह प्रतिबंध है कि किसान अपना उत्पादन सरकार द्वारा घोषित व्यापारी के अलावा बाहर के व्यापारी को नहीं बेच सकता। व्यापारी उक्त कृषि उपज जितने मे उपभोक्ता को बेचेगा उसमें से दो से चार प्रतिशत तक तो बिक्री कर सरकार जमा करा लेगी तथा दो प्रतिशत तक मंडी टैक्स जमा करा लेगी। व्यापारी का मुनाफा अलग से। शेष बचा हुआ पैसा किसान को मिलेगा। व्यापारी और सरकार मिलकर हमेशा फायदे में रहेगें। इस टैक्स में से कुछ व्यापारी बचा लेगा तो कुछ अफसर। किसान को तो काटकर ही मिलेगा। किसान किसी अन्य को खुला बेचने हेतु स्वतंत्र नहीं है। ऐसा ही प्रतिबंध वनोपज पर भी हैं। अपने खेत में पैदा विभिन्न उत्पादो को वनोपज घोषित करके उसे मनमाने रेट पर खरीदना सभी सरकारों की नीति रही है। हर सरकार कांग्रेसी किसान शोषक नीति पर चल रही है। यहॉ तक कि अपने खेत मे पैदा लकड़ी भी किसान स्वतंत्रता से नही बेच सकता। लाखों की अपनी खेत की लकड़ी कटाई के परमीशन में ही किसान की आधी जान निकल जाती है। परमीशन के बाद जो आाधी जान बची उसका तीस प्रतिशत सरकारी खजाने में जमा करवाना पडता है। बाकी बीस प्रतिशत किसान घर लाता है। हमारे नेताओं को शर्म नहीं आती कि वन आच्छादित सरगुजा जिले में मलेशिया की लकड़ी और उससे बने सामान आ रहें हैं किन्तु सरगुजा का किसान अपनी लकड़ी उस मूल्य पर नही बेच सकता जो मलेशिया वाले को मिलेगा। मैं पूरी तरह आस्वस्त हूॅ कि यदि सरकार किसानों की जमीन पर पैदा वनोपज से अपनी कमाई करना भी बन्द कर दे तो सरगुजा जिले में भारी मात्रा मे पेड़ लगाना संभव हैं। मुझे तो लिखते हुए भी शर्म आती है कि अपनी जमीन पर पैदा आंवला पर भी सरकार को टैक्स चाहिये।

सरकारों ने धान के रेट बहुत बढा दिये, साल बीज के भी रेट बढाये। यदि भारत की अन्य सरकारें किसानो को लूट लूट कर लूट के माल का तीस प्रतिशत किसानों पर खर्च करती है तो छत्तीसगढ़ सरकार लूट के माल का पचास प्रतिशत खर्च कर देती है किन्तु छत्तीसगढ़ सरकार भी किसानों के किसी भी उत्पादन को टैक्स फ्री करने की दिशा मे नहीं बढ़ रही।

<u>प्रश्न– आपने लिखा है कि कृषि उपज पर भी कर लगता है। मैने पता किया बताया गया कि किसानों पर किसी तरह का कर नहीं है। जो भी कर लिया जाता है वह व्यापारियों से लिया जाता है सच्चाई क्या है इसे आप और स्पष्ट करें?</u>

<u>उत्तर</u>–किसान अपनी जो भी फसल तैयार करता है वह मंडी में व्यापारी को बेचता है, व्यापारी से उक्त माल उपभोक्ता खरीदता हैं। गांव का हर किसान कुछ वस्तुऍ बेचता है और कुछ खरीदता है। गांव के नब्बे प्रतिशत लोग कुछ न

कुछ पैदा करते हैं या खरीदतें हैं। बहुत कम लोग ही हैं जो सिर्फ खरीदतें ही हैं किन्तु पैदा कुछ नहीं करते। उपभोक्ता जिस मूल्य पर व्यापारी से माल खरीदता है उसमें से सरकारी टैक्स काटकर ही तो व्यापारी उत्पादक से अनाज लेता हैं। कल्पना करिये कि उपभोक्ता मक्का दस रूपये किलो व्यापारी से खरीदता है और सरकार व्यापारी से पचास पैसा किलो टैक्स वसूल कर ले तो व्यापारी किसानो को नौ रूपया पचास पैसा ही देगा। उसमें से ही वह अन्य अपना लाभ या खर्चे भी किसान को काट कर देगा। आप बताईये कि बिचौलिया कभी टैक्स देता है क्या? टैक्स तो उपभोक्ता और उत्पादक ही मिलकर दिया करते है। व्यापारी तो उक्त टैक्स में से कुछ न कुछ घपला भले ही कर दे किन्तु किसी भी माल पर लगने वाला कोई कर कभी भी व्यापारी नहीं देता। व्यापारी टैक्स चोरी के लिये ही चिल्लाता रहता है अन्यथा टैक्स से व्यापारी को कोई हानि कभी नहीं होती।

कोई व्यापारी कुल मिलाकर जितना टैक्स इकट्ठा करके सरकार को देता है उतना तो कुल मिलाकर उसका लाभ भी नही होता। कुछ वस्तुओं पर दस से बारह प्रतिशत तक कर है। यदि व्यापारी अपनी कुल विक्री का पांच प्रतिशत भी सरकार को दे दे तो व्यापारी का दिवाला पिट जायेगा। व्यापारी टैक्स देता है यह असत्य है जो जानबूझकर फैलाया जाता हैं। गांव का किसान शहर मे माल बेचता है तो शहर का व्यापारी उससे टैक्स काटकर किसान को पैसा देता है किसान जब उक्त व्यापारी से कपड़ा किराना या अन्य सामान खरीदता है तब व्यापारी किसान से टैक्स जोड़कर पैसा लेता हैं। किसान ने सौ रूपये का अनाज बेचा तो उसे पचान्नवे रूपया प्राप्त हुआ और वह पचान्नवे रूपये का सामाान खरीदा तो उसे नब्बे रूपये का ही सामान प्राप्त हुआ क्योकि वह जो कुछ बेचता है, उस पर भी सरकार का टैक्स है और खरीदता है और उसपर भी। यहां तक कानून बनाये गये है कि किसान अपना अनाज उसी व्यापारी को बेच सकता है जिसे खरीदने का सरकारी लाईसेंस प्राप्त हो। मंडी के बाहर किसान बच नही सकता। मंड़ी के अन्दर व्यापारी यदि एक जुट हो जावें तो किसान अपना माल बेचने को स्वतंत्र तो है नहीं।

<u>प्रश्न –क्या कृषि और उद्योग एक दूसरे के पूरक हैं?</u>

<u>उत्तर</u>– भारतीय राजनेताओं और पश्चिम के राजनेताओं मे एक बहुत बड़ा फर्क यह है कि पाश्चात्य राजनीतिज्ञ बहुत सोच समझ कर कानून बनाते है। और भारत के राज्य नेताओं को कानून बनाने में मजा आता है। पाश्चात्य संसद अपने एक सत्र में जितने नये कानून बनाती है, भारतीय संसद उतने ही समय में उनसे कई गुणा अधिक कानून पास कर देती है। कई सौ वर्षो की गुलामी के बाद इन्हे कानून बनाने का अधिकार प्राप्त हुआ। अधिकार शौक में बदल गया और जब हमारे नेता संसद और विधानसभाओं में बैठते है तो खुद को तानाशाह से कम समझते ही नही। परिणाम यह होता है कि उनकी आधी अधूरी

सोच ही कानून का स्वरूप ग्रहण कर लेती है और देश एसे–एसे अनावश्यक कानूनों को लम्बे समय झेलता रहता है। यह शौक कोई वर्तमान राजनेताओं में पैदा हुआ हो ऐसा नही है। स्वतंत्रता के तत्काल बाद ही यह शौक पैदा हो गया था जब हमारे नेताओं ने किरायेदारों के पक्ष में कानून बनाया। कानून बनाने वालों में स्वयं को समाजवादी सिद्ध करने की होड लगी हुई थी। कानून बनाते समय यह नही सोचा गया कि यदि भविष्य में किराये के मकान बनने बन्द हो गये तब क्या करना होगा। परिणाम आज हम भुगत रहे हैं। इसी तरह अम्बेडकर जी ने हिन्दू कोड बिल बनाने की जल्दबाजी की। इस कोड बिल पर समाज में स्वतंत्र बहस होने ही नही दी गई। अम्बेडकर जी और नेहरू जी ने स्वतंत्र बहस न कराकर बिल के पक्ष में एकतरफा प्रचार कराया। इस एक पक्षीय प्रचार कराने में सरकारी खजाने तक का दुरूपयोग हुआ किन्तु आज तक कोई सवाल नही उठ सका कि कानून बनाने में इतनी जल्दबाजी क्यों? संसद में जब कोड बिल पास होने में विलम्ब होने लगा तो अम्बेडकर जी ने नाराज होकर अपना इस्तीफा तक सौप दिया क्योकि वे तो उसे प्रतिष्ठा का प्रश्न बना चुके थे।

आरक्षण का मामला भी वैसा ही था। देश के हर शुभचिंतक यह समझते थे कि सवर्ण तथा अवर्ण के बीच की दूरी कम करने का अच्छा आधार आरक्षण नही है। जब तक आदिवासियों, अवर्णो पिछडों की आर्थिक स्थिति नही सुधरती तब तक यह दूरी कम नही हो सकती। आर्थिक स्थिति सुधर सकती है श्रम की मांग और मूल्य बढ़ाने से, लेकिन हमारे नेताओं को तो संसद में अपना गुट मजबूत करना था। इन्होनें धड़ाधड़ संसद तथा नौकरियों में आरक्षण पास कर दिया जो आज धीरे धीरे हमारी व्यवस्था के लिये नासूर का रूप ग्रहण कर चुका है। पहले शासक और शासित की जो दूरी थी वह धीरे–धीरे बढ़ती चली गई क्योंकि पहले शासक पक्ष में सवर्णो की बहुतायत होने से अलग रूप था। अब तो शासक पक्ष में आदिवासी हरिजन भी सवर्णो के साथ घुल मिल गये है। इसलिये अब बोलने वाला कोई नहीं बचा।

यदि हम पाश्चात्य देशों की कार्य प्रणाली की तुलना करें तो उन लोगों ने अपने अपने देशों में जो संविधान बनाये है उनमें शायद ही कभी संशोधन की जरूरत पड़ती हो। यदि संविधान में संशोधन भी करना हो तो सम्पूर्ण समाज में पक्ष विपक्ष के बीच बहस छिडती है। यदि आवश्यक हो तो जनमतसंग्रह भी होता है। तब बहुत विचार करके संविधान संशोधन होता है। २००६ के नवम्बर माह में स्विटजरलैंड में बहस छिड गई कि मुस्लिम मीनारों के ऊपर मीनार बनाना उचित है या नहीं। लम्बी बहस चली और सर्व सम्मति नहीं बनी। तब पूरे स्विटजरलैंड में जनमत संग्रह हुआ जिसमें सरकारी पक्ष हार गया और जनता ने विरोध में मत दे दिया। यहॉ भारत में तो गाजर मूली की तरह कानून बन जाते है। मैं अनेक कानूनों को जानता हूँ जो आम लोग नही जानते क्योंकि वे कानून पूरी तरह अनावश्यक तथा अव्यावहारिक होते हुये भी आज तक लागू है।

नेताओं को बैठे–बिठाये कुछ न कुछ नया करने की जल्दबाजी में उल्टे सीधे नियम बन जाना स्वाभाविक ही है। सरगुजा जिले में किसानों को गन्ने का उचित मूल्य मिले इसलिये शक्कर कारखाना लगवा दिया। कारखाना सरकारी है इसलिये घाटा भी होना ठीक नही। मिल के आस पास के किसानों के गन्ना विक्रय तथा गुड़ पर प्रतिबंध का फरमान भी जारी कर दिया गया। तर्क दिया गया कि ऐसा फरमान तो पूरे देश भर की गन्ना मिलों के आसपास लागू है। हुआ यह कि गन्ना फैक्ट्री समय पर चालू ही नहीं हो पाई। बेचारे किसानों का गन्ना खेतों में ही खड़े–खड़ेसूख गया क्योकि न तो वे किसी अन्य को बेच सकते थे न ही गुड़ बना सकते थे। सरकारों ने इसकी सुध ही नहीं ली क्योकि सरगुजा कोई बिहार यू.पी. तो है नहीं जो हो हल्ला होगा। बेचारे किसानों ने इस वर्ष बहुत कम मात्रा में गन्ने की खेती की। सरकारी अफसर अब किसानों की खुशामद कर रहे है कि वे गन्ने का रकबा बढ़ावें। गन्ने की खुली बिक्री पर रोक का औचित्य क्या था? जब बाजार में शक्कर चालीस रूपये बिक रही है तो किसानों को अपने गन्ने का मोलभाव करने पर रोक क्यों? क्योकि यदि किसान गन्ना मंहगा देगा तो मिल मालिक से सरकार सस्ती चीनी लेवी के रूप में नहीं ले सकेगी। अपनी लेवी सस्ती रखने के लिये किसानों पर अमानवीय अत्याचार हुए और सरकार चुप रही।

छत्तीसगढ़ राज्य में कृषि भूमि के विक्रय पर कुछ इस प्रकार प्रतिबंध लगे कि कृषि भूमि बाहर के लोग तो बिल्कुल ही न खरीद सके और यहॉ के लोग भी खरीदे तो खेती के अलावा अन्य कार्यो में उनका उपयोग न कर सकें। अन्य कार्य से उनका आशय उद्योग या निवास कालोनी या मकान बनाने का है। इस सोच को आगे बढ़ाने के लिये रमन सिंह सरकार ने बाकायदा महाराष्ट्र सरकार का अध्ययन भी कराया है। यह बात सच है कि धीरे धीरे खेती का रकबा घट रहा है और मकान या उद्योगों में खेती की जमीन बदल रही है। इस प्रवृति को रोकने की आवश्यकता से मै सहमत हूँ, किन्तु मैं रमन सिंह के सुझाव को आत्मघाती प्रस्ताव मानता हूँ कि किसी कानून के द्वारा मजबूर करके खेती का रकबा बढ़ने की खुशफहमी तो हो सकती है किन्तु रकबा नही बढ़ सकता। जिस तरह खेती का क्षेत्रफल बढ़ना चाहिये उसी तरह उद्योगों का भी क्षेत्र बढ़ना चाहिये और उसी तरह मकान भी बनाने चाहियें। तीनो काम आवश्यक है। एक का गला घोटकर दूसरे का प्रोत्साहन संभव नही है। छत्तीसगढ़ के विधानसभा भवन में न खेती होती है न उद्योग। वहॉ तो सिर्फ कानून के बीज बोये जाते है और अधिकारो की फसल काटी जाती है। नेताओं को क्या पता कि खेती का रकबा घट क्यों रहा हैं। सच बात तो यह है कि खेती अलाभकार होने से बड़ी मात्रा में खेती पड़त भूमि के रूप मे रह जा रही है। मैनें स्वयं महाराष्ट्र में जाकर इस स्थिति को समझा है। जब छत्तीसगढ़ बना उस समय कृषि उपज के क्रय विक्रय पर मंडी टैक्स पचास पैसा प्रति सैकड़ा था। बिहार में नीतिश ने उस मंड़ी टैक्स को माफ

कर दिया और जोगी रमन सिंह की सरकार ने उक्त कृषि उपज पर मंडी कर को चार गुणा बढाकर दो प्रतिशत कर दिया। किसानों को तोहफा दिया गया टैक्स बढ़ाकर। अन्य कई प्रकार के टैक्स तो अलग से है ही। कृषि उपज वन उपज पर भारी भारी टैक्स लगाकर तथा प्रतिबंध लगाकर आप खेती को प्रोत्साहित नही कर सकते। पिछले चालीस पचास वर्षो से आपने किसानों को खेती करने से निराश कर दिया है। किसान या तो नौकरी खोज रहा है या कोई अन्य उद्योग खोज रहा है किन्तु खेती नहीं करना चाहता जब तक कि अच्छे साधन उपलब्ध न हो। आप कानून बनाकर यदि कृषि का क्षेत्र बढ़ाने की कोशिश करगें तो उससे कई गुना अधिक औद्योगिक क्षेत्र को नुकसान होगा। भारत सरकार ने पिछले दो वर्षो से कृषि उत्पाद मूल्य बढ़ाने पर आंशिक ध्यान दिया है। छत्तीसगढ़ सरकार ने भी अच्छी पहल की है। कुछ लाभ भी दिखने लगा है। किन्तु उस लाभ के जल्दबाजी में उद्योगों और मकान बनाने पर कानूनी प्रतिबंध तो बहुत ही घातक होगा। एक ऐसे ही सिरफिरे अफसर ने बस्तर के अबूझमाड़ क्षेत्र में बाहरी लोगो के प्रवेश पर ही रोक लगा दी थी। तीस वर्ष बाद उस क्षेत्र का हाल देख रहे है कि वह क्षेत्र विकास से कितना पीछे रह गया। आज वह क्षेत्र पूरे भारत के लिये सिर दर्द बना हुआ है। छतीसगढ़ से बाहर के लोग छतीसगढ़ में उद्योग लगाने की भूमि न खरीद सके यह बात वैसे ही किसी सिरफिरे ने आपको समझाई होगी। महाराष्ट्र के किसानों की बाहरी लोगों को जीमन बेचने पर रोक का तो रमन सिंह जी अध्ययन करा रहे है, साथ ही यह अध्ययन करावें कि महाराष्ट्र का ही किसान इतनी आत्महत्याएँ क्यो कर रहा है? किसानों की भमि विक्रय पर कई तरह के प्रतिबंधो से किसानो की भूमि के मूल्य कम हो गये। उनकी भूमि बिकी नही। फिर आत्म हत्या क्यों? यदि कृषि भूमि का क्षेत्रफल घटने की रमन सिंह जी को इतनी चिन्ता है तो किसानो की भूमि का मूल्य कम न हो इसकी चिन्ता कौन करेगा ?

वर्तमान के कुछ वर्षो मे छत्तीसगढ़ का तीव्रऔद्योगिक विकास हुआ है। यहॉ कृषि भूमि के मूल्य भी तेजी से बढ़े है। मै बिल्कुल ही नही समझ पा रहा कि एक ओर तो सरकारें बड़े बड़ेउद्योगपतियों को राज्यों में लाने के लिये खुशामद कर रहे है दूसरी ओर स्वयं अपने प्रयत्नों से जमीन खरीद कर लघु उद्योग लगानें वाले के राह में रोड़े अटका रहे है।

भारतीय समाजशास्त्री कैसी बचकानी बातें करते है इसपर मैनें एक घटना सुनी थी। घटना के अनुसार यह मांग उठी कि आदिवासियों का चौतरफा विकास तो खूब हो किन्तु उनकी मूल संस्कृति पर कोई आंच न आवें। ये दोनो ही बातें बिल्कुल विपरीत है किन्तु दोनो ही प्रयत्न एक साथ चलते रहें। परिणाम हुआ कि न उस क्षेत्र का तीव्र विकास ही हुआ न संस्कृति का रक्षण ही हुआ। यदि विकास होगा तो रहन सहन बदलना स्वाभाविक है, किन्तु हम ऐसी विपरीत बाते करते है। छत्तीसगढ़ का औद्योगिक विकास और कृषि विकास दोनों एक साथ ही चल सकते है। यदि एक को दबा कर एक को उठाया गया

तो दोनों से हाथ धोना पड़ सकता है। छत्तीसगढ़ में अभी दोनो दिशाओं में विकास के कारण सरकारों को जो पूरे भारत मे वाहवाही मिली है, उस वाहवाही में अब धैर्य खोना ठीक नही। किसानों की भूमि विक्रय पर रोक लगाकर रमन सिंह जी किसानों का बहुत बड़ा अहित करनें जा रहे है। किसानों को प्रोत्साहित करिये। उन लोगों पर लगे कानूनी प्रतिबंध हटाइयें। उनके उत्पादन के क्रय विक्रय के बीच से टैक्स हटाइये। कृषि उत्पादन के विक्रय मूल्य को ऐसा रखिये कि किसान स्वयं ही खेती की ओर झुकने लगे। पिछड़ेपन का स्थायी समाधान विकासहै न कि शोषण से सुरक्षा। शोषण से सुरक्षा अस्थायी कदम हो सकता है किन्तु समाधान नहीं। कृषि और उद्योग एक दूसरे के पूरक है, प्रतिस्पर्धी नहीं। छत्तीसगढ़ में उद्योगों के विस्तार से प्राप्त आय को सरकारों ने कृषि सहायता पर खर्च भी किया है। अब पता नही वे क्यों दोनो को पृथक पृथक देखने लगें ? कृषि को उद्योग का दर्जा दिया जाए यह भी एक उचित मॉग है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था को संकट से उबरने देने की जरूरत है इससे मै सहमत हूॅ।

<u>देवेन्द्र शर्मा, कृषि विशेषज्ञ एवं पर्यावरणविद, दैनिक भास्कर में लिखे उनके लेख पर मुनि जी का उत्तर</u>

<u>उत्तरः–</u> मैं नहीं जानता था कि भारत सरकार जानबूझकर किसी योजना के अन्तर्गत शहरों की ओर ग्रामीण आबादी का पलायन कर रही है। वह योजना भी विश्व बैंक के निर्देशानुसार बनी है, यह बात भी मैं पहली बार ही सुन रहा हूॅ। कृषि के विरुद्ध यह योजना क्यों बनी तथा इसके गुण दोष क्या हैं यह विचार मंथन का विषय है किन्तु यह बात स्पष्ट होनी ही चाहिये कि आज हम सब जिस कृषक उत्पीड़न, शहरी आबादी वृद्धि, या अन्य कुछ समस्यों को समस्या समझ रहें हैं वे सब किसी परिणाम के अन्तर्गत बनाई गई योजना के परिणाम हैं, समस्या नहीं। सरकारें इन्हे समस्या बताकर समाधान की जो बातें करती हैं वे उनका ढोंग हैं।

आप कृषि एवं पर्यावरण के विषेषज्ञ है और मैं श्रमजीवियों की अधिक चिंता करता हूॅ। मैं मानता हूॅ कि कृषि संबंधी जो बातें आपने लिखी है वे सही है किन्तु मैं यह समझता हूॅ कि कृषि की अपेक्षा श्रम की अधिक अवहेलना हुई हैं तथा श्रमजीवी अधिक परेशान है। बहुत प्राचीन समय में भी प्राथमिक स्तर पर वर्ण व्यवस्था में दो ही वर्ग थे– 1. श्रमजीवी 2. बुद्धिजीवी। श्रमजीवी वह व्यक्ति माना जाता था जो किसी बुद्धिजीवी को श्रम बेचता था। दूसरी ओर बुद्धिजीवी वह माना जाता था जो किसी का श्रम खरीदता था। बीच में भी कुछ लोग थे जो पूरी तरह अपने श्रम पर ही जीवित रहते थे। चाहे वे बौद्धिक श्रम करते हो या अपने श्रम में ही आंशिक बुद्धि का उपयोग करते हो तथा न वे श्रम खरीदते हो, ना ही बेचते हो। ऐसे अनेक लोगों को श्रमजीवी या बुद्धिजीवी में अलग–अलग करना कठिन कार्य था।

वर्तमान समय में कृषि को एक इकाई मानकर निष्कर्ष निकालना ठीक

नहीं क्योंकि आज भी दो विपरीत बातें एक साथ सत्य है– पहला कृषि उत्पादन लगातार तेजी से बढ रहा है। मैं नहीं समझा कि दोनों एक साथ कैसे संभव हो रहा है। यदि किसान आत्महत्या कर रहा है तो श्रमजीवी आत्महत्या क्यों नहीं कर रहा है। इसका अर्थ है कि भारत में छोटे किसानों की स्थिति श्रमजीवियों की अपेक्षा अधिक खराब है तथा बड़े किसानों की स्थिति बहुत अच्छी है। इसका अर्थ हुआ कि जिस तरह लघु उद्योगों का मरना सच है, छोटे व्यापारी परेशान है, उसी तरह छोटे किसान भी परेशान है और सरकार ने किसान योजना के अन्तर्गत छोटे किसानों को श्रमजीवी बनने की ओर प्रेरित करने की योजना बनाई होगी। इन सब बातों के होते हुए भी मैं महसूस करता हूँ कि कृषि उत्पादन को और अधिक लाभकारी मूल्य दिया जाना चाहिए था क्योंकि कृषि श्रम का अधिक समायोजन कर सकती है। इससे उत्पादन भी बढेगा और श्रम की मांग भी बढ़ेगी।

दूसरा मैं समाज को कृषि और उद्योग में विभाजित नहीं करना चाहता बल्कि श्रमजीवी और बुद्धिजीवी के बीच विभाजित करना चाहता हूँ। मेरा ऐसा मानना है कि कृत्रिम उर्जा सस्ता होना श्रमजीवियों के विरुद्ध बुद्धिजीवियों का षड़यंत्र है। कृत्रिम उर्जा को महंगा न करके आम कृषि उत्पादों पर भारी कर लगाना बहुत घातक है यदि कृषि उत्पादों पर से सारे टैक्स हटा दिये जाये तथा तदनुसार कृत्रिम उर्जा की भारी मूल्यवृद्धि कर दी जाये तो लगभग सभी आर्थिक समस्याओं का समाधान संभव हैं। हमें उन बातों पर गंभीरता से विचार करना चाहिए जिनके आधार पर भारत सरकार ने विश्व बैंक की बात मानी और ऐसे कदम उठाये तथा जो आज हमारे समक्ष समस्या के रुप में खडे है। मुझे तो संदेह होता है कि कहीं किसी विदेशी दबाव के कारण ही तो 70 वर्षो से भारत की सरकारे कृत्रिम उर्जा को महंगा न करके कृषि उत्पादों पर भारी कर लगाती है। यदि ऐसा कुछ है तो यह गंभीर चिंता का विषय है और इस पर चर्चा होनी चाहिए।

<u>प्रश्न – खेती लाभ का व्यवसाय या हानि का?</u>

<u>उत्तर</u>– हम लम्बे समय से देख रहे है कि नुकसान से प्रभावित होकर किसान आत्महत्या कर रहे है। सरकार उन्हे बडे बडे पैकेज दे रही है। परन्तु उनकी आत्महत्या कम नही हो रही। स्वतंत्रता के समय एक श्रमिक को दिनभर की मजदूरी एक से दो किलो तक अनाज मिलती थी। आज दस से पंद्रह किलो तक मिल रहा है। पिछले चार से छः महिने मे शक्कर अनाज सहित सभी उत्पादनों मे बीस से तीस प्रतिशत तक मूल्यो मे कमी आयी है। मै स्वयं तीस से चालीस वर्षो तक खेती किया और लुट पिट कर खेती करना बंद करके व्यवसाय की तरफ मेरा परिवार चला गया। अनुभव बताता है कि खेती लाभदायक व्यवसाय नही है। दूसरी ओर स्वतंत्रता के बाद आज तक लगातार कृषि उत्पादन बढ़ रहा है आबादी यदि चार गुना बढ़ी है तो कृषि उत्पादन दस से पंद्रह गुना बढ़ गया

है। भारत पहले के जमाने मे खेती की वस्तुओ का आयात करता था। बड़ी मुस्किल से हमारे लोगों का पेट भर पाता था। आज भारत कृषि उत्पादन के निर्यात की स्थिति मे है। दाल और तेल हम पहले की अपेक्षा कम मात्रा मे मंगा रहे है। यदि कोई जमीन का मालिक स्वयं खेती न करे और किसी अन्य किसान को खेती करने के लिये वार्षिक किराये पर दे दे तब भी उसे पर्याप्त मात्रा मे किराया मिल जाता है। स्पष्ट है कि खेती मे लाभ है। इस वर्ष कृषि उत्पादनो के दाम तेजी से कम हुए है। उसके बाद भी खेती करने वालो मे किसी प्रकार की निराशा नही दिख रही है।

दोनों ही बाते सच है और एक दुसरे के विपरीत हैं। मैने इन दोनों बातो को समझने के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि आधुनिक तरीके से खेती लाभदायक व्यवसाय है और परंपरागत तरीके की खेती नुकसान दे रही है। खेती करने वाला सामान्य किसान प्रतिवर्ष ठीक–ठाक रहता है किन्तु यदि किसी वर्ष उसे जोर का झटका लगा तो संभल नही पाता। दूसरी ओर बड़े किसान सब प्रकार के झटके बर्दाश्त कर लेते है। इसलिये छोटी खेती भले ही अलाभ कर हो किन्तु बड़ी खेती अलाभकर नही है। फिर भी मेरा अनुभव है कि सरकारी नौकरी और व्यापार की खेती से तुलना की जाय तो अन्य दोनों की अपेक्षा खेती या तो नुकसानदायक होगी अथवा अपेक्षाकृत कम लाभदायक। मेरा मीडिया से निवेदन है कि वह महंगाई का हल्ला करके उत्पादको के जले पर नमक छीटने का काम न करे बल्कि यथार्त को यथार्त के समान ही प्रकट करे। भारत पहले के जमाने मे खेती की वस्तुओ का आयात करता था। बडी मुश्किल से हमारे लोगो का पेट भर पाता था। आज भारत कृषि उत्पादन के निर्यात की स्थिति में है। दाल और तेल हम पहले की अपेक्षा कम मात्रा मे मंगा रहे है। आधुनिक तरीके से खेती लाभदायक व्यवसाय है और परंपरागत तरीके की खेती नुकसान दे रही है। शहरों में किसी भी प्रकार का उत्पादन नहीं होता। कृषि उत्पाद सहित अन्य उत्पाद गावों में ही पैदा होते है। गॉवों से निकलकर लोग शहरों की ओर पलायन कर रहे हैं। इससे पता चलता है कि उपभोग की वस्तुएँ सस्ती हुई है और शहरी जीवन अधिक सुविधाजनक हुआ है। सविनय अवज्ञा के मुद्वे क्या हो किसानों को भी यह पता चलेगा कि कृषि उत्पादनो पर अप्रत्यक्ष कर लगता है तथा उपभोक्ताओ को भी पता चलेगा।

हमारी संस्थाएँ

- मार्गदर्शक सामाजिक शोध संस्थान
- ज्ञान यज्ञ परिवार

संस्थान के कार्य

- समाज विज्ञान पर विश्वव्यापी रिसर्च तथा निष्कर्ष निकालना।

परिवार के कार्य

- देश भर में ज्ञान केन्द्रो का इस तरह विस्तार कि वहाँ स्वतंत्र विचार मंथन हो तथा संवाद प्रणाली विकसित हो।

कार्यक्रम

- ज्ञान चर्चा- प्रतिदिन शाम साढ़े आठ से साढ़े नौ बजे तक किसी एक पूर्व घोषित विषय पर स्वतंत्र वेबिनार।
- ज्ञान मंथन- प्रत्येक रविवार को जूम एप के माध्यम से दोपहर ग्यारह बजे बजरंग मुनि जी द्वारा पूर्व निर्धारित विषय पर विचार प्रस्तुति तथा सोमवार को ग्यारह बजे उक्त विषय पर प्रश्नोत्तर ।
- मार्गदर्शक मंडल- ऐसे न्यूनतम पाँच सौ लोगों की टीम तैयार करना जो समाज विज्ञान पर रिसर्च करने की क्षमता रखते हैं।
- ज्ञान कुंभ- वर्ष मे दो बार पंद्रह-पंद्रह दिनो के ज्ञान कुंभ जिसमे मार्ग दर्शक मंडल के लोग स्वतंत्र विचार द्वारा प्रतिदिन दो-दो विषयों पर निष्कर्ष निकाल कर समाज को दें।

माध्यम

- ज्ञान तत्व पाक्षिक पत्रिका
- फेसबुक एप से प्रसारण
- वाट्सएप ग्रुप से प्रसारण
- जूम एप पर वेबिनार
- यू टयूब चैनल
- इस्टाग्राम
- टेलीग्राम
- कू एप

ज्ञानतत्व पाक्षिक पत्रिका का माह में दो प्रति का प्रकाशन सुचारु रुप से होना शुरु हो गया है। इसकी सहयोग राशि रु. 100/- वार्षिक अभी तय किया गया है। लेख प्रस्तुती आदि पर सुझाव अवश्य दें।

पंजीकृत पाक्षिक
पंजीकरण क्रमांक-68939/98

डाक पंजीयन क्रमांक- छ.ग./रायगढ़/010/2022-2024

प्रति,

श्री/श्रीमती ______________________________

____

____

____

संदेश

वर्तमान संसदीय लोक तंत्र में तो संसद एक जेल खाना है। जहां हमारा भगवान रुपी संविधान कैद है। भगवान को जेलखाने से मुक्त कराना हमारी सर्वोच्च प्राथमिकता है। संसदीय लोकतंत्र को सहभागी लोकतंत्र में बदलना ही होगा। लोक संसद के लिये आंदोलन इसका प्रारंभिक चरण है। लोक स्वराज्य मंच ने इसकी पहल की है। लोक स्वराज्य मंच से जुड़िये और अपने भगवान को जेलखाने से मुक्त कराने की पहल कीजिए।

– बजरंगलाल

पत्र व्यवहार का पता

पता – बजरंग लाल अग्रवाल पोस्ट बॉक्स 15, रायपुर (छ.ग.) 492001
Website : www.margdarshak.info

प्रकाशक, सम्पादक व स्वामी – बजरंगलाल

09617079344

Email : bajrang.muni@gmail.com
support@margdarshak.info
Facebook Id : बजरंग मुनि (User Name)

मुद्रक – माया प्रेस रामानुजगंज, सरगुजा (छ.ग.)